स्वास्थ्यवर्धक भोजन कैसा हो?

डॉ. चंचलमल चोरडिया

शरीर का अर्थ शास्त्र

शरीर का अपना अर्थशास्त्र होता है। वह अपनी बुनियादी आवश्यकताएँ पहले पूरी करता है उसके पश्चात् गैर बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। जैसे गरीब व्यक्ति को सबसे पहले भोजन की आवश्यकता होती है। येन-केन प्रकारेण वह अपनी भूख को शान्त करने का प्रयास करता है। उसके पश्चात् ही कपड़ों की, रहने की, मनोरंजन, स्वादिष्ठ भोजन आदि की तरफ उसका ध्यान जाता है। शरीर की प्राथमिक आवश्यकताएँ पूर्ण होने के पश्चात् ही मन की जरूरतें प्रारम्भ होती है। जब मन की आवश्यकताएँ भी नहीं होती अथवा नियन्त्रित होती है तब ही, साधना, उपासना, आराधना आदि के द्वारा आत्मा की आवश्यकता की तरफ प्रायः जन साधारण का ध्यान जाता है, व्यक्ति ध्यान और समाधि आदि पर विचार करता है। आत्मा को ऊर्जा वे ही साधक दे पाते हैं, जिनके शरीर और मन की आवश्यकताएँ सीमित होती हैं और जो प्राण ऊर्जा का अपव्यय अथवा दुरुपयोग नहीं करते।

प्रकाशक

कल्याणमल चंचलमल चोरडिया ट्रस्ट, जोधपुर

चोरडिया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.)

फोन: 0291-2621454 (R), फैक्स: 2435471, मोबाइल: 94141-34606

E-mail: cmchordia.jodhpur@gmail.com, Website: www.chordiahealth.com

सहयोग राशि 20/-

शरीर के प्रमुख अंगों में प्रकृति से प्राय:
सर्वाधिक एवं निम्नतम प्राण ऊर्जा के प्रवाह का समय

	अंगों का नाम	अंग में प्राण ऊर्जा के सर्वाधिक प्रवाह का समय	अंग में प्राण ऊर्जा के निम्नतम प्रवाह का समय
1.	फेंफड़ें (LU)	प्रात: 3 से 5 बजे तक	दोपहर 3 बजे से 5 बजे तक
2.	बड़ी आंत (LI)	प्रात: 5 से 7 बजे तक	सांय 5 बजे से 7 बजे तक
3.	आमाशय (ST)	प्रात: 7 से 9 बजे तक	सांय 7 बजे से 9 बजे तक
4.	तिल्ली(SP)/ पेनक्रियाज	प्रात: 9 से 11 बजे तक	रात्रि 9 बजे से 11 बजे तक
5.	हृदय (H)	प्रात: 11 से 1 बजे तक	रात्रि 11 से 1 बजे तक
6.	छोटी आंत (SI)	दोपहर 1 से 3 बजे तक	रात्रि 1 से 3 बजे तक
7.	मूत्राशय (UB)	दोपहर 3 से 5 बजे तक	रात्रि 3 से 5 बजे तक
8.	गुर्दे(K)	सांयकाल 5 से 7 बजे तक	प्रात: 5 से 7 बजे तक
9.	पेरीकार्डियन (PC)	रात्रि 7 से 9 बजे तक	प्रात: 7 से 9 बजे तक
10.	त्रिअग्री (TW)	रात्रि 9 से 11 बजे तक	दिन में 9 से 11 बजे तक
11.	पित्ताशय (GB)	रात्रि 11 से 1 बजे तक	दोपहर 11 से 1 बजे तक
12.	लीवर(LIV)	रात्रि 1 से 3 बजे तक	दोपहर 1 से 3 बजे तक

उपर्युक्त तालिका दिन एवं रात को 12-12 घण्टों तथा सूर्योदय प्राय: 6 बजे से सायंकाल सूर्यास्त 6 बजे का आधार मानकर बनाई गयी है। परन्तु जहाँ दिन-रात बराबर नहीं होते हैं, वहाँ पर उसके अनुरूप ऊर्जा प्रवाह के समय में आंशिक परिवर्तन होता रहता है। यद्यपि क्रम तो वही रहता है, फिर भी उस स्थिति में उससे सम्बन्धित आगे अथवा पीछे वाला अंग भी प्रभावित हो सकता है। अत: रोग का सही निदान करने के लिए सम्बन्धित अंगों के लक्षणों के प्रभाव का भी ध्यान रखना आवश्यक होता है। तालिका को देखने से दूसरा तथ्य यह सामने आता है कि शरीर में एक ही प्रकार की ऊर्जा का प्रवाह सम्बन्धित यिन-यांग के जोड़े में 4 घण्टे तक अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय और ठीक 12 घण्टे पश्चात् 4 घण्टों तक उनमें प्रकृति से प्राण ऊर्जा का प्रवाह निम्नतम होता है।

सलाद खाना आजकल हानिकारक भी हो सकता हैं ?

रसायनिक खाद से निर्मित एवं कीटनाशक दवाओं के उपयोग से सब्जियाँ विषयुक्त हो जाती है। सलाद भी पके हुए भोजन की अपेक्षा जल्दी खराब होता है तथा कच्चा खाने से भी भावों में उत्तेजना आती है। इसी कारण जब किसी व्यक्ति पर क्रोध आता है तो कुछ क्रोधी व्यक्ति ''कच्चा चबा जाऊँगा'' प्राय: ऐसा कह दिया करते हैं। अत: ऐसी कच्ची सब्जियों को सलाद के रूप में खाना हानिकारक हो सकता है।

भोजन और स्वास्थ्य

भोजन हेतु समग्र दृष्टिकोण आवश्यक

हवा और पानी के पश्चात् शरीर को चलाने के लिये तीसरी मुख्य आवश्यकता भोजन की होती है। भोजन की शरीर के सभी अवयवों के निर्माण में अहं भूमिका होती है। शरीर को ताकत मिलती है। अत: भोजन के बारे में काफी शोध हो रही है। परन्तु अधिकांश आहार विशेषज्ञों ने शरीर को ताकतवर, शक्तिशाली बनाने हेतु आवश्यक रसायनिक तत्त्व और ऊर्जा को जैसे-प्रोटीन, विटामिन, कार्बोज, लवण, जल, वसा और केलोरीज की मात्रा को तो अत्यधिक महत्त्व दिया। किसी खाद्य पदार्थ में क्या-क्या तत्त्व कितनी-कितनी मात्रा में होते हैं, उनकी जानकारी से जन साधारण को अवगत कराया। परन्तु भोजन के पदार्थ कितने सात्त्विक, अहिंसक, शुद्ध और पवित्र होने चाहिये, उस संबंध में अपेक्षित प्राथमिकता नहीं दी। परिणाम स्वरूप पौष्टिकता के नाम पर आज भक्ष्य-अभक्ष्य, खाद्य-अखाद्य, करणीय-अकरणीय, अहिंसा-हिंसा, न्याय-अन्याय, वर्जित-अवर्जित आदि का विवेक मानव खोता जा रहा है।

अधिकांश आहार गोष्ठियों में भोजन के पोष्टिक तत्त्वों एवं केलोरिज के बारे में चर्चा और चिन्तन प्राय: सीमित होता है। भोजन से जीवन क्यों, कितना और कैसे प्रभावित होता है? प्राय: गौण रहता है। यदि आपको कोई अपने घर भोजन के लिये आमंत्रित करे, अच्छे से अच्छा भोजन बनावे, परन्तु भोजन खिलाते समय आपकी उपेक्षा करे, आदर सत्कार न करे, आप पर व्यंग करे, जैसे- क्या आपको जिन्दगी में ऐसा अच्छा भोजन किसी ने कराया? यदि ऐसा व्यवहार करें तो भोजन में उपलब्ध पोष्टिक तत्त्व क्यों प्रभावहीन हो जाते हैं?

भोजन कब, क्यों, कितना, कैसा और कहाँ करना चाहिए और कब, क्यों, कैसा और कहाँ नहीं करना चाहिये? भोजन कहाँ और कैसे वातावरण और बर्तनों में बनाना चाहिये और खिलाना चाहिए? दो भोजन के बीच में कितने समय का कम से कम अन्तराल होना चाहिये? थोड़ा-थोड़ा अथवा बार-बार क्यों नहीं खाना चाहिए? प्रकृति के अनुरूप भोजन का सर्वश्रेष्ठ अनुकूल समय कौन सा होता है? रात्रि भोजन क्यों नहीं करना चाहिए? भोजन करते समय आसपास का वातावरण, हमारी भूख, आसन, विचार, भावना, मानसिकता, चिन्तन कैसा है? भोजन मौसम और शारीरिक अवस्था के अनुकूल है अथवा नहीं? उसमें क्या-क्या कितने-कितने उपयोगी अथवा अनुपयोगी पदार्थ हैं? जिस उद्देश्य से भोजन किया जा रहा है, उसका कितना प्रतिशत लाभ मिल रहा है? अगर नहीं मिल रहा है, तो क्यों नहीं मिल रहा हैं?

भोजन को प्रभावित करने वाले ऐसे अनेकों परमावश्यक तथ्य आहार विशेषज्ञों की चर्चा, चिन्तन और अभिव्यक्ति में प्राय: गौण रहते हैं। रोगी को भोजन संबंधी परामर्श देते समय प्राय:

उपेक्षित रहते हैं। जिनका महत्त्व पोष्टिकता से भी अधिक होता है। जिस प्रकार विष की चंद बूंदें टनों दूध को अपेय बना देती है। एक चिनगारी सारे घास के ढ़ेर को जलाने की क्षमता रखती है। एक सांप के काटने से व्यक्ति मर सकता है। मृत्यु के लिये सौ सांपों के काटनें की आवश्यकता नहीं होती। ठीक उसी प्रकार भोजन में उपरोक्त तथ्यों में से किसी भी तथ्य की उपेक्षा भोजन से होने वाले लाभ से वंचित रख सकती है।

भारत के नागरिकों का खान-पान, मौसम की विविधता, विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियाँ, पारिवारिक और सामाजिक संरचना में अनेकता तथा रीति-रिवाजों, त्यौहारों, अलग-अलग उपासना पद्धतियों का समन्वय होने से एक जैसा भोजन संभव नहीं होता। परन्तु पाश्चात्य संस्कृति में प्रायः इतना बदलाव नहीं होता। हमारी दिनचर्या और जीवन शैली विदेशियों से मेल नहीं खाती। अतः भोजन में उनका अन्धा:नुकरण स्वास्थ्य के सदैव अनुकूल हो आवश्यक नहीं।

जिस वातावरण और स्थान पर हम रहते हैं, हमारे लिये आवश्यक सभी खाद्य पदार्थो का उत्पादन प्रकृति उस क्षेत्र में करती है। सभी जीव जन्तु वही खाते हैं, जो उनके आसपास उपलब्ध होता है। वे कोई खाद्य पदार्थो का अन्य स्थानों से आयात नहीं करते। अतः जिस मौसम में जो फल, सब्जियाँ और अन्य खाद्य पदार्थ सहज और सरलता से भरपूर मात्रा में उपलब्ध हों, वे सारे पदार्थ प्रायः स्वास्थ्य के अनुकूल होते हैं। प्रकृति के नियम और कानून गरीब और अमीर सबके लिये समान होते हैं। अतः मंहगे, बेमौसमी, आयातित खाद्यान्न का सेवन स्वास्थ्य के लिये सदैव उपयोगी हो, पूर्णतः मिथ्याधारणा है।

जो भोजन सहज रूप से उपलब्ध होता है, उसे शांत भाव से ग्रहण करना चाहिये। भोजन में पौष्टिक तत्त्वों एवं केलोरीज की आवश्यक मात्रा, जितनी ऊर्जा नहीं देती, उससे ज्यादा मानसिक तनाव, भय और चिन्ता के कारण ऊर्जा का अपव्यय हो जाता है, जो घाटे का सौदा होता है। अधिकांश व्यक्तियों को सावधानी रखते हुए भी वही भोजन लेना पड़ता है जो घर में बनता है। घर में प्रत्येक परिजन के आवश्यकतानुसार प्रायः भोजन नहीं बनता। अतः भोजन करते समय भोजन के पदार्थों के बारे में व्यर्थ चिन्तन नहीं करना चाहिये। जिससे व्यर्थ तनाव और चिन्ता होती है। जो भोजन में उपलब्ध पौष्टिक तत्त्वों की कमी से ज्यादा हानिकारक होती है। अतः उपलब्ध भोजन को शांत भाव से ग्रहण करना अधिक लाभप्रद होता है।

भोजन में प्राथमिकता क्या हो ?

भोजन के संबंध में हमारी प्राथमिकताएँ क्या हो ? क्या कभी हमने मनोबल और आत्मबल की क्षमताओं को जानने, समझने तथा अनुभव करने का प्रयास किया ? भोजन न केवल शरीर को ताकत देता है, अपितु हमारे विचारों, भावनाओं, चिन्तन तथा जीवन शैली को भी प्रभावित करता है। जिस प्रकार बिना कपड़े आभूषण से शरीर को सजाने वालों पर दुनिया हँसती हैं। यद्यपि आभूषणों का

मूल्य तो कपड़ों (पोशाक) से ज्यादा ही होता है। ठीक उसी प्रकार पौष्टिकता और स्वाद के नाम पर मन और आत्मा को विकारी और कमजोर बनाने वाला भोजन करना अदूरदर्शिता पूर्ण आचरण ही होता है।

भोजन का पूर्ण चयापचय (Metabolism) आवश्यक

भोजन जितना महत्वपूर्ण नहीं, उतना उसका सही पाचन जरूरी है। भोजन के पाचन से सर्व प्रथम उसका रस बनता है। उसके पश्चात् रक्त, मांस, चर्बी, हड्डी और अंत में वीर्य बनता है। वीर्य का निर्माण चयापचय की सम्पूर्ण क्रिया होने पर ही संभव है। जिस भोजन से मात्र रक्त, चर्बी अथवा हड्डियों आदि के अवयव बनते हों, वीर्य नहीं बनता हो, उस भोजन की पाचन क्रिया को पूर्ण एवं संतुलित नहीं कहा जा सकता। साथ ही हमें असंयम पूर्ण जीवन जीते हुए अपने वीर्य का यथा संभव अपव्यय और दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। वीर्य का नाश कमजोरी और रोगों का आमन्त्रण है तथा वीर्य की रक्षा स्वस्थ जीवन का राजमार्ग। आप स्वयं चिन्तन करें कि आपकी प्राथमिकता क्या है ?

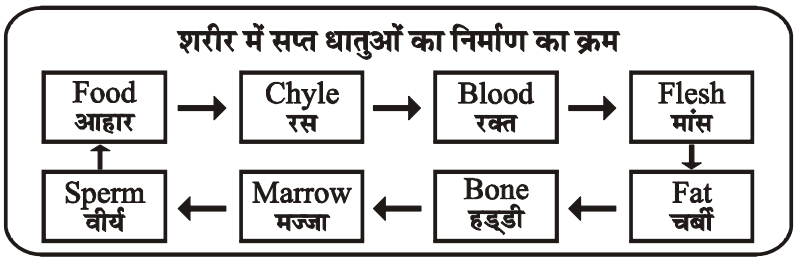

आजकल अधिकांश व्यक्ति प्रायः भोजन शरीर की आवश्यकता अनुसार नहीं करते, अपितु मजबूरी और स्वाद की प्राथमिकता के अनुसार करते हैं। भोजन से न केवल स्वाद, अपितु शक्ति भी मिलनी चाहिए। हमें जीने के लिये भोजन करना चाहिये। परन्तु आजकल प्रायः हम भोजन के लिये जीते हैं, ऐसा समझा जावे तो आश्चर्य नहीं। कभी-कभी तो गंदी से गंदी वस्तुओं को खाते समय छान बीन नहीं करते। मात्र उस पर डाली गई सुगन्ध, आकर्षक पेकिंग, मन लुभावने भ्रामक विज्ञापनों से भ्रमित हो स्वाद की लोलुपता के कारण स्वविवेक न होने से ग्रहण करते तनिक भी संकोच नहीं करते। भोजन का पाचन हो या न हो खाना एक रिवाज बन गया हैं।

इसी कारण आज दुनिया में 80 प्रतिशत से अधिक व्यक्ति खाने का विवेक न होने से अथवा ज्यादा खाने से बीमार होते हैं। इसीलिये तो कहा गया है कि **" More Dishes More Diseases"** अर्थात् ''जितना ज्यादा खाना उतने ज्यादा रोग।'' हमारे यहां लोकोक्ति प्रसिद्ध है- ''एक समय खाने वाला योगी, दो समय खाने वाला भोगी, तीन समय खाने वाला रोगी तथा उससे ज्यादा खाने वाला भविष्य में बनने वाला महारोगी।'' हम स्वयं आत्म निरीक्षण करें कि हम कौनसी श्रेणी में हैं। इसी कारण बाह्य रूप से भले ही हम अपने आपको स्वस्थ समझें, हमारे शरीर में परोक्ष रूप से सैकड़ों रोग होते हैं।

हम भलीभांति जानते हैं कि जिस फुटबाल अथवा हाकी की टीम में यदि गोल रक्षक कमजोर हो, वह टीम मैच तभी जीत सकती हैं, जबकि आगे के खिलाड़ी अधिक मजबूत, सजग, सक्रिय हों, ताकि गोलरक्षक तक फुटबाल कम से कम पहुँचे। ठीक उसी प्रकार यदि हम दांतों का कार्य आमाशय से करवाते हैं, तो आमाशय को भोजन पचाने के लिए अधिक श्रम करना पड़ता है, अधिक पाचक रसों की आवश्यकता होती है। परन्तु शरीर सीमित मात्रा में ही पाचक रस बनाता है। परिणामस्वरूप पाचन बिगड़ने लगता है। अतः स्वास्थ्य प्रेमियों को दांतों का कार्य दांतों से ही करना चाहिए न कि आमाशय से। अर्थात् भोजन को पूर्ण चबा-चबा कर ही खाना चाहिए।

बार-बार भोजन करना हानिकारक

हमारे ऋषि मुनियों ने एकासन करने की जो बात कहीं, उसके पीछे यही उद्देश्य था कि मुँह में जब चाहे कुछ न डाला जाये। जो कुछ खाना हो एक या दो बार ही खाया जाये। ताकि हमारे आमाशय को बाकी समय पूर्ण आराम मिल जाये। जब हम कोई भी पदार्थ मुंह में डालते हैं, चाहें उसकी मात्रा बहुत कम ही क्यों न हो, सारी पाचन व्यवस्था को सजग और सक्रिय हो कार्य करना पड़ता है। जिस प्रकार किसी रेलवे फाटक पर कार्यरत चौकीदार को चाहे अकेला इंजिन उधर से निकले अथवा राजधानी एक्सप्रेस, फाटक बंद करने की प्रक्रिया में उसे कोई फर्क नहीं पड़ता। किसी बस में चाहे एक यात्री हो अथवा पूरी बस भरी हो, बस चालक को कोई अन्तर नहीं पड़ता। पेट्रोल की खपत में भी बहुत ज्यादा अन्तर नहीं पड़ता। इसी प्रकार जितनी अधिक बार मुंह में कुछ भी डाला जायेगा उतना पाचन अंगों को अधिक कार्य करना पड़ेगा। परिणामस्वरूप जब हमारा मुख्य भोजन होगा तब वे अपनी पूर्ण क्षमता से कार्य नहीं कर पाते। समय पर अच्छी स्वाभाविक भूख नहीं लगती। भोजन समय की नियमितता नहीं रहती। इसी कारण आज अधिकांश व्यक्तियों का पाचन प्रायः ठीक नहीं होता। जितनी कम बार खाया जायेगा, उतनी भूख अच्छी लगेगी और पाचन अच्छा होगा। अतः जो मधुमेह अथवा पाचन संबंधी रोगों से पीड़ित हैं, उन्हें तो बार-बार कभी नहीं खाना चाहिए। परन्तु आज के आहार विशेषज्ञों का सोच इसके विपरीत पाया गया हैं। रोगी को थोड़ा-थोड़ा बार-बार खाने के लिये प्रेरित किया जाता है। जिस पर बिना किसी पूर्वाग्रह के शोध एवं चिन्तन आवश्यक है, ताकि मधुमेह तथा पाचन रोग जैसी असाध्य बीमारी से रोगी को राहत दिलाई जा सके।

जो व्यक्ति अपनी प्रकृति और मौसम के अनुकूल भोजन करता है, भूख से थोड़ा कम और नियमित समय पर भोजन करता है, वह दीर्घजीवी होता है। आधुनिक खान-पान के समय की एक और विशेषता है कि जब शरीर श्रम करता है, तब उसे कम आहार दिया जाता है, और जब वह विश्राम की अवस्था में होता है तो उसे अधिक मात्रा में कैलोरीयुक्त आहार दिया जाता है। जैसे दिन का समय जो मेहनत परिश्रम का होता है तब तो हल्का भोजन, नाश्ता, चाय, काफी, ठंडे पेय आदि

कम केलोरी वाले आहार करता है और रात्रि में जो विश्राम का समय होता है, प्रायः गरिष्ठ भोजन किया जाता है, जो स्वास्थ्य के मूल सिद्धान्तों के विपरीत होता है।

शरीर के अनुकूल खाद्य पदार्थों के परीक्षण की विधि

प्रायः हम अनुभव करते है कि सभी व्यक्तियों को सभी वस्तुएँ अनुकूल नहीं होती। किसी को किसी वस्तु से एलर्जी होती है अथवा ताकत मिलती है, जबकि उसी पदार्थ से अन्य व्यक्ति में वैसा लाभ नहीं होता। किसी को दूध लाभप्रद होता है, जबकि किसी अन्य को दूध का पाचन भी कठिन होता है। ऐसा क्यों? प्रत्येक व्यक्ति के शरीर में उपलब्ध अवयवों की मात्रा का अनुपात अलग-अलग होता हैं? जो पदार्थ किसी मौसम में लाभप्रद हो, अन्य मौसम में हानिकारक भी हो सकता है।

दुनियाँ में कोई दो व्यक्ति पूर्णरूप से समान नहीं हो सकते। प्रत्येक की आवश्यकताएँ अलग होती है। अतः कम से कम जो पदार्थ हानिकारक हों, अनुपयोगी हों, उनकी जानकारी आवश्यक होती है।

कौनसी वस्तु किसके लिये कब, कितनी लाभप्रद अथवा हानिकारक होती है, यदि इस बात का पता चल जायें, तो अनुपयोगी पदार्थों के सेवन से सहज ही बचा जा सकता है, जो स्वास्थ्य के लिये परमावश्यक है।

आज का युग तरंगों के प्रभाव से पूर्णतः परिचित है। प्रत्येक पदार्थ से उसके गुण धर्म के आधार पर तरंगें निकलती है। यदि इन तरंगों से शरीर की ताकत बढ़ती है तो वे पदार्थ हमारे लिये उपयोगी होते हैं। परन्तु जो तरंगे हमारी शक्ति घटाती है, वे पदार्थ हमारे लिये अनुपयोगी होते हैं। जो व्यापारी अपने व्यवसाय में हेराफेरी करते हैं, यदि उनके दूकान के बाहर कोई इंकमटेक्स अथवा सेल्स टेक्स आफिसर की गाड़ी ठहरती है तो, उन्हें तनाव क्यों हो जाता है? पुलिस को देखते ही अपराधी क्यों घबराने लगते हैं? जितना प्रेम माता को अपने बच्चे से होता है, भले ही उसका रूप कैसा ही क्यों न हो, उतना प्रेम अन्य बच्चों से क्यों नहीं होता? हमारे शरीर के चारों तरफ आभा मंडल अथवा चुम्बकीय क्षेत्र होता है। जिस पदार्थ की तरंगें उस आभा मंडल के अनुकूल होती है, उसे शक्तिशाली बनाती है, वे वस्तुएँ और प्रवृत्तियाँ मानव के लिए हितकारी होती हैं। परन्तु जिन तरंगों से आभा मंडल विकृत और अशुद्ध बनता है, वे पदार्थ हमारे लिए अनुपयोगी होती हैं। जिस वस्तु की आवश्यकता होती है, उसकी प्राप्ति पर प्रसन्नता क्यों होते हैं? जो वस्तु आवश्यक न हों, हानिकारक हों, उसको हम स्वीकार नहीं करते। ठीक उसी प्रकार जिस पदार्थ की तरंगे हमारे आभा मंडल अथवा शरीर के चारों तरफ स्थित चुम्बकीय क्षेत्र को ताकतवर बनाती हैं, वे पदार्थ हमारे लिये उपयोगी होते हैं तथा जो तरंगे शरीर की तरंगों से मिल उसके प्रभाव को कम कर देती हैं, वे पदार्थ हमारे लिये उपयोगी नहीं हो सकते है? इसी सिद्धान्त के आधार पर हम खाद्य पदार्थों एवं दवाओं का परीक्षण कर सकते हैं।

प्रयोग– एक वजन करने वाली मशीन लें। फिर अपनी बायीं हथेली को हृदय की धड़कन वाले स्थान से स्पर्श कर, दूसरी हथेली से वजन करने वाली मशीन पर जितना ज्यादा से ज्यादा दबाव दे सकते हैं दें, और अपनी ताकत को मशीन से माप लें। अब जो वस्तु अथवा दवा जिसका परीक्षण करना है, उसे

बायीं हथेली में लेकर अथवा कागज में लेकर पुनः धड़कन वाले स्थान पर हलका सा दबाव से स्पर्श करें। तरल पदार्थ का परीक्षण करना हों तो कांच के बर्तन में लेकर धड़कन वाले स्थान पर स्पर्श करें तथा दाहिनी हथेली को पहले की भांति वजन तोलने वाली मशीन पर अधिकतम दबाव देकर पुनः अपनी ताकत का माप करें। अगर आपकी ताकत में वृद्धि होती है तो जिस वस्तु का आप बायें हाथ में परीक्षण कर रहे हैं, वह वस्तु आपके लिये स्वास्थ्यवर्द्धक होती है। परन्तु इसके विपरित यदि आपकी शक्ति पहले से कम होती है तो, वह खाद्य वस्तु खाना हानिकारक होता है। हमारा हृदय शरीर में सबसे संवेदनशील अंग है तथा उसकी धड़कन बायीं हथेली में जो पदार्थ है, उनसे निकलने वाली तरंगों के लिए एण्टिना का कार्य करती है। जिन खाद्य पदार्थों की तरंगें खाद्य पदार्थ के पेट में जाने से पहले ही व्यक्ति की ताकत घटा दें, उन खाद्य पदार्थों और दवाईयों का सेवन निश्चित् रूप से हानिकारक होता है। यह प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि परीक्षण करते समय हमारे शरीर की स्थिति एक जैसी ही होनी चाहिए। दोनों समय मशीन पर एक जैसा अधिकतम दबाव डालना चाहिए। अलग-अलग दबाव डाला गया अथवा शरीर की स्थिति (Posture) को बदला गया तो इस प्रयोग के परिणाम प्रामाणिक नहीं होंगे।

भोजन कैसा हो ?

आजकल अप्राकृतिक रसायनिक खाद के उपयोग एवं कीटाणु- नाशक औषधियों के अधिक प्रयोग के कारण बाजार में उपलब्ध अधिक खाद्यान्न, फल और सब्जियाँ दूषित हो जाती है। वे शरीर का सम्पूर्ण पोषण नहीं कर सकती, बल्कि सेवन से शरीर में विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न होने की संभावना रहती है। हमारे शरीर में अम्ल व क्षार का अनुपात 20:80 है। अतः भोजन में भी यथा संभव 80 प्रतिशत क्षार तत्त्व 20 प्रतिशत अम्ल तत्त्व होने चाहिए, जिससे शारीरिक अवयवों का सही निर्माण हो सकें।

अतः जिन खाद्य पदार्थों के उत्पादन में रसायनिक खाद, विषैली कीटनाशक दवाओं का उपयोग न किया गया हों, जिसको प्राप्त करने के लिए किसी भी चेतनाशील प्राणी की हत्या न की गई हों अथवा उन पर क्रूरता, अत्याचार और कष्ट नहीं दिये गये हों, जो भोजन अपनी प्राकृतिक अवस्था और स्वरूप में हों उसकी अवस्था एवं स्वरूप में कम से कम परिवर्तन हुआ हों, ऐसा अपनी

आवश्यकता के अनुरूप पौष्टिक पदार्थों से ओतप्रोत सात्त्विक भोजन को ही सर्व श्रेष्ठ भोजन कहा जा सकता है। अतः यथासंभव खाद्य पदार्थों का चुनाव करते समय प्राथमिकता देनी चाहिए।

''पशु खाता है केवल पेट भरने के लिए,
मूर्ख खाता है केवल स्वाद के लिए।
बुद्धिमान खाता है आरोग्य और शक्ति के लिए,
सन्त खाता है केवल साधना के लिए।।''

यदि हम अपने आपको बुद्धिमान समझते हैं, तो भोजन को ग्रहण करने से पूर्व एक क्षण चिन्तन करें क्या यह भोजन हमारे अनुकूल है? किसी प्राणी के अपवित्र रक्त, मांस और चर्बी की गंदगी तो इसमें नहीं है? किसी बेगुनाह जीव की हत्या से निर्मित उस जीव की बददुआएँ की तरंगें भोजन के माध्यम से पेट में जाकर हमारे में हिंसा, क्रूरता, निर्दयता और प्रति हिंसा की भावना तो पैदा नहीं करेगी? अतः भ्रामक विज्ञापनों से प्रभावित हों, अखाद्य वस्तु पेट में डालकर अपने पेट को कूड़ा दान न बनायें।

भोजन बनाने हेतु सावधानियाँ

जो महिलाएँ मासिक धर्म में होती है, उनका आभामंडल विकृत हो जाता है। उनके सम्पर्क में आने वाले पदार्थ भी विकृत हो जाते हैं। इसी कारण हमारे यहाँ उस अवस्था में महिलाओं को भोजन बनाने और पीने के पानी के संग्रह वाले स्थानों के स्पर्श पर पहले पूर्ण प्रतिबंध था। परन्तु आजकल पाश्चात्त्य संस्कृति के अन्धा:नुकरण के परिणाम स्वरूप अज्ञान और विवेक की कमी के कारण पढ़ी लिखी अधिकांश महिलाएँ उस नियम का प्रायः पालन नहीं करती। जिससे उनके द्वारा बनाया गया भोजन विकृत हो जाता है। जिस पर वर्तमान वैज्ञानिकों द्वारा किये गये निष्कर्षों के आधार पर सम्यक् चिन्तन और आचरण अनिवार्य है, किन्तु उपेक्षा अनुचित हैं।

दूसरी बात उबालने, मिक्सी में रस निकालने, फ्रीज अथवा कोल्ड स्टोरेज में रखने से खाद्य पदार्थों का प्राकृतिक स्वरूप बदल जाता है और पौष्टिक तत्त्वों में कमी आ जाती है। भोजन बनाते समय भी आजकल स्टील, एलुमिनियम और प्लास्टिक के बर्तनों का प्रयोग अधिक होता है। जिससे भोजन में हानिकारक, रसायनिक पदार्थों के मिश्रित होने की संभावना बढ़ जाती है। ऐसा भोजन शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता घटाता है।

एलुमीनियम थोड़ी सी गर्मी पाकर गलने लगता हैं और खाद्य पदार्थों के साथ पेट में जब पहुँच जाता है तो विकार पैदा करता है, जिससे गुर्दे में पथरी और आंतों में खराबी होने की संभावनाएँ बढ़ सकती हैं। अतः यथा संभव एलुमीनियम के बर्तनों का उपयोग खाना बनाने में नहीं करना चाहिए। परन्तु आजकल प्रायः घरों में कूकर, ओवन आदि एलुमीनियम के ही भोजन बनाने में उपयोग में लिए

जाते हैं, जो उचित नहीं है। इसी कारण हमारे पूर्वज भोजन बनाने में मिट्टी के बर्तनों तथा अपनी क्षमतानुसार चाँदी के बर्तनों का उपयोग खाना खाने में करते थे।

भोजन बनाने वालों के भावों का महत्व

भोजन बनाने वालों के भावों की तरंगें भी हमारे भोजन को प्रभावित करती है। माता और पत्नी जिस प्रेम से अपने पुत्र एवं पति को खिलाने हेतु भोजन बनाती है, उसमें बाजार में उपलब्ध पौष्टिक पदार्थों से अधिक ऊर्जा और तृप्ति मिलती है। भोजन जिन भावों से बनाया जायेगा, खाने वाले का मन उसी के अनुरूप बन जायेगा। इसीलिये हमारे यहाँ लोकोक्ति प्रसिद्ध है- ''जैसा अन्न वैसा मन, जैसा मन वैसा चिन्तन। जैसा चिन्तन वैसा विचार। जैसा विचार वैसा स्वभाव। जैसा स्वभाव वैसी वृत्तियाँ और जैसी वृत्तियाँ वैसे संस्कार।''

खाया हुआ भोजन तीन भागों में विभक्त हो जाता है। स्थूल भाग मल बनता है, मध्यम अंश से शरीर के अवयवों का निर्माण होता है। सूक्ष्म अंश से मन की पुष्टि होती है। जिस प्रकार दही के मन्थन से उसका सूक्ष्म अंश ऊपर आकर मक्खन बन जाता है, जिसको और तपाया जाये तो घी बन जाता है। ठीक उसी प्रकार अन्न के भावांश से मन बनता है। इसी कारण होटल के खाने से पेट तो भर सकता है, परन्तु मन नहीं। पेट भोजन से भर सकता है, परन्तु मन तो भोजन में होने वाले भावों से ही भरता है। जैन आगमों में निर्दोष आहार प्राप्ति के सम्बन्ध में विस्तृत विवेचन मिलता हैं। आध्यात्मिक संतों का आहार कैसा हो? उसे कैसे प्राप्त किया जाए? उसको ग्रहण कैसे किया जाए तथा ग्रहण करते समय कैसा चिन्तन हों? साधुओं को आहार लेते समय जिन 42 दोषों की चर्चा की गई है तथा आहार ग्रहण करते समय जिन 47 दोषों से सावधान रहने का जो निर्देष दिया गया है, निश्चय ही पठनीय, मननीय, चिन्तनीय एवं आचरणीय है। ऐसा आहार ही साधक के शरीर के पोषण के साथ-साथ मन को संयमित, नियन्त्रित एवं पोषण करने वाला होता है। जिज्ञासु पाठक उनका अध्ययन कर अपने आहार को अधिकाधिक सात्विक बनाएं, ऐसा अपेक्षित है। इसी कारण तामसिक भोजन करने वाला तामसिक वृत्तियों वाला होता है। तामसिक व्यक्ति शरीर के लिए जीता है। उसके लिये बाकी सब बातें गौण होती है। उसके भोजन का उद्देश्य होता है स्वाद और पेट भरना। परिणाम स्वरूप वह अधिक प्रमादी होता है। राजसिक भोजन से मन और बुद्धि चंचल होती है। राजसिक प्रवृत्ति वाले अत्यधिक महत्वाकांक्षी होते हैं। अतः उन्हें उत्तेजना पैदा करने वाला भोजन अच्छा लगता है। सात्त्विक भोजन ही संतुलित होने से सर्वश्रेष्ठ होता है। क्योंकि ऐसा भोजन करने से न तो उत्तेजना आती है, न मादकता, न आलस्य और न कमजोरी। परन्तु स्फूर्ति और ताकत प्राप्त होती हैं।

बाजार में उपलब्ध भोजन तथा कारखानों में निर्मित पदार्थों में घर में बने भोजन जैसी पवित्रता, स्वच्छता, विवेक और उच्च भावों का अभाव होने से, उस भोजन से मात्र पेट भरा जा सकता है, परन्तु शरीर में आवश्यक अवयवों का पूर्ण निर्माण प्रायः नहीं होता। अपितु अपाच्य पदार्थों

के विसर्जन हेतु शरीर को अधिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती हैं। परन्तु आजकल घर में भोजन बनाने को मजबूरी समझा जाता है और बाहर बने बनाये पदार्थों को खाने का प्रचलन काफी बढ़ गया है, जिससे न केवल स्वास्थ्य बिगड़ता है, अपितु पारिवारिक प्रेम, अपनापन और घनिष्ठता समाप्त हो रही है, जो भारतीय संस्कृति की पवित्र आर्दशों के लिए घातक है।

भोजन भी दवा है

भोजन के मुख्य रूप से छः स्वाद होते हैं- 1. मीठा, 2. खट्टा, 3. नमकीन, 4. तीखा, 5. कड़वा, 6. कषैला।

अधिकांश व्यक्तियों के भोजन में प्रायः अंतिम दो स्वादों का अभाव होता है। यदि भोजन में इनका समुचित समावेश किया जाये तो मधुर स्वाद का दुष्प्रभाव दूर हो जाता है और पाचन सुधरता है।

भोजन में स्वाद संतुलन का महत्त्व

चीनी पंच तत्त्व के सिद्धान्तानुसार विभिन्न स्वादों का संबंध शरीर के अलग-अलग अंगों से होता है तथा उनका ऐसा मानना है कि खट्टे स्वाद लीवर और पित्ताशय, नमकीन स्वाद से गुर्दे और मूत्राशय, तीखे स्वाद का फेंफड़ों और बड़ी आंत, मधुर स्वाद का तिल्ली (स्पलीन) और आमाशय तथा कड़वे स्वाद से हृदय और छोटी आंत आदि अधिक प्रभावित होते हैं एवं संबंधित अंगों का पोषण भी करते हैं। स्वाद चिकित्सक भोजन में स्वाद का संतुलन ही स्वास्थ्य का आधार मानते हैं तथा भोजन में विभिन्न स्वादों का संतुलन कर उपचार करते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सकों और आहार विशेषज्ञों के दृष्टिकोण से भोजन ही औषधि है। अतः उनकी मान्यता के अनुसार रोगी का उपचार चिकित्सालय की अपेक्षा भोजनालय में होना चाहिए। बड़े-बड़े अनुभवी हृदय रोगों के चिकित्सक दवाओं के दुष्प्रभावों के कारण मात्र संतुलित भोजन से हजारों हृदय रोगियों का सफल उपचार करने में सफल हुए हैं। स्वस्थ होने पर भोजन पोषण के लिये और रोग होने पर रोग को दूर करने के लिए भोजन औषधि का कार्य करता है।

शरीर के लिए जो अनावश्यक, अपाच्य, अभक्ष्य, अखाद्य पदार्थों का खाना, पेट को कचरा पेटी बनाना है। गलत आहार जितनी सरलता से गले के नीचे उतर जाता है, उतनी सहजता से उसके अपाच्य तत्त्व, पेट से बाहर नहीं निकल पाते। इस प्रकार व्यक्ति अज्ञान और अविवेक के कारण स्वयं गलती करता है और रोग को गले लगाता है। साथ ही अपनी लापरवाही के कारण बढ़ते रोगों की उपेक्षा करता है, जब तक वे अपना विकराल रूप न धारण कर लें। ऐसे मानव क्या स्वयं के प्रति ईमानदार कहें जा सकते हैं?

भोजन कितना, कैसे और कहाँ खाया जाये ?

भोजन उतना ही करें, जिसका पूर्ण पाचन हो सकें। हम प्रायः जितना खाते हैं, उसके दो तिहाही भाग से हम जीवित रहते हैं। तथा एक तिहाही भाग से चिकित्सक। पाचन संस्थान शरीर का वह तंत्र है जो आहार को ग्रहण करने, उसका पाचन करने, पाच्य आहार से शरीर के लिए आवश्यक समस्त पोषक तत्त्वों का अवशोषण करने तथा पाचन एवं अवशोषण के उपरान्त जो अनुपयोगी पदार्थ बचते हैं, उन व्यर्थ पदार्थों का मल के रूप में शरीर से बाहर निकालने का कार्य करता है। उपर्युक्त कार्यों में यदि कहीं भी अपूर्णता रहती है अथवा अवरोध होता है तो जो भोजन शक्ति वर्धक होना चाहिये, वह स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हो जाता है।

पाचन क्रिया का प्रारम्भ मुँह से होता है। भोजन को खूब चबाकर धीरे-धीरे खाना चाहिए, ताकि उसमें अधिक से अधिक लार और थूक का मिश्रण हो सकें। ऐसा करने से भोजन का अधिकांश पाचन मुंह में ही हो जाता है। अधिक स्वाद मिलता है, और भोजन से तृप्ति होती है। परन्तु आज तेजी का युग है, प्रत्येक व्यक्ति कम समय और कम श्रम में जीवन की समस्या का सरलतम समाधान चाहता है। परिणामस्वरूप भोजन के लिये अधिकांश व्यक्तियों को समय ही नहीं होता है। वे मात्र मजबूरी से खाना खाते हैं। शान्त, प्रसन्नचित, एकाग्रता से मौन पूर्वक खाना नहीं खा सकते। भोजन करते समय सारा ध्यान भोजन में होना चाहिए न कि कुछ देखने, सुनने, पढ़ने अथवा बातचीत करने में बोलते रहने से मुँह में लार कम बनती है। फलतः मुँह सूखने लग सकता है। जिससे भोजन के बीच में पानी पीना पड़ता है। भोजन के बीच में पानी पीने से पेट की जठराग्नि शान्त हो जाती हैं और आमाशय में भोजन को पेन्क्रियाज, लीवर, गाल ब्लेडर आदि से मिलने वाले पाचक रस पतले हो जाते हैं। जिससे आमाशय में भोजन का पूर्ण क्षमता से पाचन नहीं हो सकता।

दूसरी बात भोजन को चबा-चबा करने से, भोजन में जो शर्करा का अंश होता है, वह प्रचुर मात्रा में थूक में मिलने से उसका मुँह में ही पाचन हो जाता है और पेन्क्रियाज को उस शर्करा को पचाने के लिये ज्यादा इंसुलिन की आवश्यकता नहीं होती। अतः मधुमेह और पाचन संबंधी अन्य रोगियों के लिये धीरे-धीरे पूरा चबाकर भोजन करना सर्वोत्तम औषधि का कार्य करता है।

तीसरी बात भोजन खड़े-खड़े नहीं करना चाहिए। क्योंकि उससे आमाशय को भोजन पचाने हेतु अधिक श्रम करना पड़ता है। भोजन पालकी आसन में बैठकर करना चाहिए। भोजन करने से पूर्व अपने आराध्य का स्मरण, भोजन को नमस्कार तथा सुपात्र दान की भावना रखनी चाहिए। भोजन को भगवान का प्रसाद समझ कर खाना चाहिए। भोजन समभाव पूर्वक अर्थात बिना किसी प्रतिक्रिया, निंदा अथवा प्रशंसा के करना चाहिए। भोजन का एक कण भी झूठा नहीं डालना चाहिए। भोजन करने के पश्चात् ''आरोग्य बोहि लाभं, समाहिवर-मुत्तमं दिन्तु''- अर्थात् ग्रहण किया गया भोजन मुझे अरोग्य, निर्मल बुद्धि एवं सम्यक् श्रद्धा का पात्र बनाये- ऐसा चिन्तन करना चाहिए।

हमारे आसपास जो उपस्थित हों, उन्हें भोजन का निमन्त्रण देकर भोजन करना चाहिए। क्योंकि भूखे को भोजन खिलाकर भोजन करना हमारी संस्कृति है। पूर्व दिशा में शक्ति के स्रोत सूर्य का उदय होता है। अतः पूर्व दिशा की तरफ मुख करके भोजन करने से भोजन की शक्ति बढ़ जाती है। भोजन करते समय सूर्य स्वर चलाना चाहिए ताकि भोजन का पाचन अच्छा होता है। भोजन में कम से कम पदार्थों का समावेश होना चाहिए। अथवा जिन पदार्थों को आपस में मिलाया जा सकता है, उन्हें मिला देना चाहिए ताकि भोजन करते समय-समय बार-बार स्वाद में परिवर्तन न हों, अथवा एक ही प्रकार के पदार्थ एक साथ खाना चाहिए। फिर दूसरे पदार्थ को खाना चाहिए। हम अच्छी तरह जानते हैं कि जिस वाहन का गियर बार-बार बदला जाता हैं, उस वाहन को ज्यादा ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ठीक उसी प्रकार प्रत्येक कौर में स्वाद बदलने से भोजन के पाचन हेतु अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। भोजन स्वच्छ, प्रदुषण रहित स्थान पर करना चाहिए। भोजन करने और पानी पीते समय मेरु दण्ड सीधा नहीं होना चाहिए ताकि भोजन आमाशय में धीरे-धीरे पहुँचे।

भोजन में दृष्टि दोष

भोजन खिलाने वाले की सोच नकारात्मक, द्वेषात्मक, घृणात्मक नहीं होनी चाहिए। भोजन में स्पर्श दोष की भांति दृष्टि दोष का भी प्रभाव पड़ता है। हमारे पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार भोजन पर भूखे, नीच, दरिद्र, पाखण्डी, रोगी आदि की दृष्टि ठीक नहीं होती। उनकी विष दृष्टि भोजन में संक्रमित होने से भोजन अपाच्य बन जाता है। अच्छी या बुरी दृष्टि में कितनी शक्ति होती है, उसको आजकल सम्मोहन विद्या द्वारा प्रमाणित किया जा चुका है। व्यक्तियों की भांति अनेक पशु पक्षियों की दृष्टि भी भोजन के लिए हानिकारक होती है। अतः सर्प, कुत्ते, कौए, चील, मुर्गे आदि जानवरों की दृष्टि से भोजन को दूर रखना चाहिए। क्रोध अथवा अन्य किसी प्रकार के आवेग के समय भोजन नहीं करना चाहिए। पेय या भोजन न अधिक गर्म और न अधिक ठण्डा होना चाहिए। शरीर के तापक्रम पर भोजन अधिक लाभप्रद होता है।

भोजन करते समय पाचन सम्बन्धी नियमों का जितना अधिकाधिक पालन किया जाता है, उतना भोजन सरस, सुपाच्य और स्वादिष्ट बन जाता है उस भोजन से जो हम अपेक्षा करते हैं, उसका हमें पूरा-पूरा लाभ मिलता है।

भोजन के पश्चात् हमारी स्फूर्ति बढ़नी चाहिए। शरीर हल्का लगना चाहिए। भोजन के पश्चात् भारीपन अथवा निद्रा आना दुर्बल पाचन शक्ति के संकेत होते हैं। भोजन के तुरन्त बाद में कठिन परिश्रम कभी नहीं करना चाहिए। क्योंकि उस समय पाचन क्रिया हेतु जो अधिक रक्त संचालन की आवश्यकता आमाशय को होती है, उमसें बाधा उत्पन्न होती है। भोजन के पश्चात् कुछ समय वज्रासन में बैठना, टहलना स्वास्थ्य के लिए और पाचन के लिए लाभप्रद होता है। भोजन के पश्चात् निद्रा नहीं लेनी चाहिए। भोजन के पश्चात् निद्रा आने का कारण या तो आवश्यकता से

अधिक भोजन अथवा ठण्डा, बासी, तामसिक भोजन करना होता है। जिसको पचाने के लिए आमाशय को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। परिणामस्वरूप उस स्थिति में मस्तिष्क को आवश्यकता के अनुरूप ऊर्जा न मिलने से उसकी गतिविधि शिथिल हो जाती है और निद्रा आने लगती है।

भोजन कब करना चाहिये

कोई बीज कितना ही अच्छा क्यों न हो, अच्छी उपजाऊ जमीन पर बोया जावे, उचित हवा, पानी, धूप होने के बावजूद उचित समय पर न बोने से नहीं उगता। ठीक उसी प्रकार भोजन, पानी, हवा, निद्रा आदि का बराबर ख्याल रखने के बावजूद उचित समय पर सेवन न करने से वे अपेक्षाकृत लाभदायक नहीं होते। राम का नाम सत्य है, परन्तु शुभ प्रसंगों पर भी राम नाम सत्य है कहना अप्रासंगिक समझा जाता है। अतः हमारी दिनचर्या का चयन इस प्रकार करना चाहिये कि शरीर के अंगों की क्षमताओं का अधिकतम उपयोग हो।

स्वस्थ रहने की कामना रखने वालों को शरीर में कौनसा अंग और क्रियायें कब विशेष सक्रिय रहती है, इस बात की जानकारी आवश्यक होती है, और उसके अनुरूप आचरण करना चाहिये। हमें चिन्तन करना होगा कि कोई भी शारीरिक अथवा मानसिक क्रिया और कार्य क्यों करें? कितना करें? कहाँ करें? इन सबके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि यह क्रिया कौन से समय करें? जैसे भोजन कब करें? निद्रा कब लें? पानी कब पीयें? व्यायाम कब करें? इत्यादि। प्रकृति के अनुरूप दिनचर्या का निर्धारण और संचालन करने से शारीरिक क्षमताओं का अधिकाधिक उपयोग होता है। हम रोगों से सहज ही बच जाते हैं, यदि अज्ञानवश रोग ग्रस्त हो भी जावें तो पुनः शीघ्र स्वस्थ बन सकते हैं।

दुःख इस बात का है कि आज अधिकांश व्यक्तियों की दिनचर्या प्रकृति के अनुरूप नहीं हैं और न वे इसके प्रभाव एवम् महत्त्व को समझने का प्रयास करते हैं। अज्ञान, अविवेक, पूर्वाग्रहों, कुतर्कों, मायावी विज्ञापनों, सरकारी और सामाजिक व्यवस्थाओं के अन्धा:नुकरण के कारण प्रकृति के साथ जनसाधारण का सही सामंजस्य नहीं होता है। परिणाम स्वरूप भोजन के समय नाश्ता और निद्रा के समय जागृत रहने जैसी, आदतों को संजोये हुये हैं। हम उनके दुष्प्रभावों से अपरिचित हैं।

हम यह भूल जाते हैं कि जिसमें प्रकृति के विरुद्ध चलने की ताकत न हो, वह कम से कम प्रकृति का सहयोग तो लें। तूफान का सामना करने की क्षमता न हों तो कम से कम हवा की दिशा में तो चले, ताकि कम कठिनाई का अनुभव हो। शरीर में जिस समय जो अंग सर्वाधिक सक्रिय हों, उस समय उस अंग से संबंधित कार्य एवं क्रियाएँ करें। दूसरी बात जिस समय किसी अंग में प्रकृति से प्राण ऊर्जा का प्रवाह सर्वाधिक हो, यदि उस समय दूसरे अंगों के कार्य और क्रियायें करते हैं तो संबंधित अंग प्रकृति से प्राप्त अपने हिस्से की विशेष प्राण ऊर्जा (चेतना) से वचिंत रह जाता है। जैसे नगर

निगम से पानी के वितरण के समय, जो पानी का संग्रह नहीं करता है, उसको बाद में पानी की आवश्यकता पड़ने पर पछताना पड़ता है।

भोजन करने का उचित समय

जब हमें स्वाभाविक अच्छी भूख लगे तब ही भोजन करना चाहिए। भूख का संबन्ध हमारी आदत पर निर्भर होता है। जैसी हम आदत डालते हैं, हमें उस समय भूख लगने लग जाती है। अतः हमें भोजन की ऐसी आदत डालनी चाहिए कि जब आमाशय अधिक सक्रिय हो, उस समय हमें तेज भूख लगे। दूसरी बात जब तेज भूख लगे तो कुछ खाकर आमाशय की पूर्ण क्षमता का अपव्यय नहीं करना चाहिये। यदि ऐसा किया गया तो मुख्य भोजन के समय आमाशय भी पाचन के प्रति उदासीन हो जाए तो आश्चर्य नहीं।

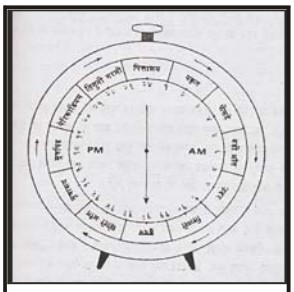

प्रमुख अंगों में प्राण ऊर्जा के अधिकतम प्रवाह को दर्शाता प्रतिदिन का समय चक्र

जितना अच्छा भोजन का पाचन प्रातःकाल में होता हैं उतना अन्य समय में नहीं होता। प्रातःकाल में व्यक्ति अपेक्षाकृत शान्त, तनाव मुक्त, षड़यंत्रों तथा उलझनों से मुक्त रहता है। अतः भोजन के समय में भी नियमितता रखी जा सकती है। ऐसे समय किया गया भोजन, अधिक सुपाच्य होता है और अमृत का कार्य करता है। विशेष रूप से मधुमेह का रोग जिसे असाध्य माना जाता है, प्रकृति के समयानुकूल जब आमाशय में प्राण ऊर्जा का प्रवाह सर्वाधिक हों, भोजन कर ठीक किया जा सकता है। इसीलिये तो लोकोक्ति प्रसिद्ध है-

"Take the morning meal like a king, afternoon lunch like a queen & evening dinner like a bagger"

अर्थात् प्रातः पूरा भरपेट खाना खाओ, दोहपर में आवश्यकता हो तो हल्का पाच्य खाना खाओं और रात में भिखारी की भांति कभी मिल जाये तो खा लो अन्यथा अपने आपको संयमित रखें। आज अधिकांश रोगों की जड़ प्रायः पेट होता हैं। अतः अपने समस्त पूर्वाग्रहों को छोड़ भोजन करने के सही समय का महत्त्व समझना चाहिये।

आयुर्वेद के सिद्धान्तानुसार प्रातः 10 बजे तक का समय शरीर में कफ प्रकृति का होता है और दिन में 10 से 2 बजे तक का समय लगभग पित्त प्रकृति का होता है। अतः हमेशा भोजन कफ प्रकृति में करना चाहिये। कफ प्रकृति में भोजन करने के बाद पित्त प्रकृति का समय होने से पाचन में मदद मिलती है। बाहर वातावरण में भी धूप निकलने से गर्मी बढ़ने लगती है। शरीर की गतिविधियाँ सक्रिय होने से पाचन आसानी से हो जाता है। इसीलिये हमारे यहाँ एक अन्य लोकोक्ति भी प्रसिद्ध है-

''सुबह का खाना खुद खाओं, दोपहर का दूसरों को खिलाओं और रात्रि का खाना दुश्मनों को खिलाओं।''

नाश्ता अधूरा आहार होता है और जब हम आंशिक आहार का पाचन आमाशय की सर्वाधिक क्षमता के समय करते हैं तो, जब हमारा मुख्य भोजन होता है, तब आमाशय की पाचन क्षमता इतनी

अधिक न होने से उसे अधिक श्रम करना पड़ता है। दूसरी बात प्रातःकाल नाश्ता करने से हमें भूख समय पर नहीं लगती। फलतः ऐसे व्यक्ति प्रायः दोपहर में भोजन करते हैं।

आधुनिक खान-पान के समय की एक और विसंगति है कि जब शरीर श्रम करता है, तब उसे कम कैलारी वाला आहार दिया जाता है और जब वह रात्रि में विश्राम की अवस्था में होता है तो उसे अधिक मात्रा में कैलोरीयुक्त आहार दिया जाता है। जैसे दिन का समय जो मेहनत परिश्रम का होता है और रात्रि में जो विश्राम का समय होता है, सामूहिक भोजों में प्रायः गरिष्ठ भोजन किया जाता है, जो स्वास्थ्य के मूल सिद्धान्तों के विपरीत होता है।

भोजन के तुरन्त बाद पानी पीना हानिकारक

भोजन के तुरन्त पहले पानी पीने से भूख शान्त हो जाती है। बिना भूख भोजन का पाचन बराबर नहीं होता एवं भोजन के पूर्व पानी पीने से आंव की वृद्धि होती है। खाना खाने के पश्चात् आमाशय में लीवर, पित्ताशय, पेन्क्रियाज आदि के स्राव और अम्ल के मिलने से जठराग्नि प्रदीप्त होती है। अतः प्रायः जनसाधारण को पानी पीने की इच्छा होती है। परन्तु पानी पीने से पाचक रस पतले हो जाते हैं, जिसके कारण आमाशय में भोजन का पूर्ण पाचन नहीं हो पाता। फलतः भोजन से जो ऊर्जा मिलनी चाहिए प्रायः नहीं मिलती। अतः भोजन के पश्चात् जितनी ज्यादा देर से पानी पीयेंगे, उतना पाचन अच्छा होता है। प्रायः भोजन के दो घंटें पश्चात् जितनी आवश्यकता हो, खूब पानी पीना चाहिए, जिससे शरीर में पानी की कमी न हो।

रात्रि भोजन क्यों हानिकारक ?

मच्छर रात्रि में ही क्यों प्रायः अधिक काटते हैं ? क्या कभी हमने चिन्तन किया ? सूर्यास्त होने के पश्चात् शरीर की प्रतिरोधक शक्ति क्यों कम हो जाती है ? ऊर्जा शक्ति की हानि होने से रात्रि में किया गया भोजन कैसे शक्तिवर्द्धक हो सकता है ?

सूर्य की रोशनी से शरीर में रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। इसी कारण प्रायः अधिकांश रोगों का प्रकोप रात में बढ़ने लगता है। प्रत्येक बीमारी भी अपेक्षाकृत रात में ज्यादा कष्टदायक होती है। इसका मुख्य कारण रात में सूर्य की गर्मी का अभाव होता है।

हमारे शरीर में सारे ऊर्जा चक्र जिन्हें कमल की उपमा दी गयी है, सूर्योदय के साथ सक्रिय होते हैं और सूर्यास्त के पश्चात् असक्रिय होने लगते हैं। अतः रात्रि में भोजन का पाचन कठिनाई से होता है। आयुर्वेद में स्पष्ट कहा गया है कि पहला मुख्य भोजन सूर्योदय से एक प्रहर बाद ही किया जाना चाहिये और दूसरा भोजन यदि आवश्यक हो तो सूर्यास्त से कम से कम एक घंटा पूर्व किया जाना चाहिए। उनका निष्कर्ष है कि सूर्यास्त के पश्चात् वायु और पित्त के बढ़ जाने की संभावना अधिक रहती है।

चरक संहिता के अनुसार रात्रि भोजन दूषित, तामसिक और अम्लीभूत होकर शरीर को भारी क्षति पहुँचाता है।

सूर्यास्त के पश्चात् बहुत से सूक्ष्म जीव पैदा हो जाते हैं। सूर्य का प्रकाश इन कीटाणुओं को पैदा होने से रोकता है। सूर्य के ताप में अनेक विषैले कीटाणु निष्क्रिय बन जाते हैं, जो सूर्यास्त के बाद पुनः सक्रिय होने लगते हैं। प्रायः हम अनुभव करते हैं कि, दिन में 1000 वाट के बल्ब के पास भी सूक्ष्म जीव नहीं आते, जबकि रात में थोड़ी सी रोशनी में भी बल्ब के आसपास मच्छर मंडराने लगते हैं। ये जीव आहार की गन्ध के कारण भोज्य पदार्थों की तरफ आकर्षित होते हैं। वहीं दूसरी तरफ भोजन में भी अनेक सूक्ष्म बेक्टीरियाँ उत्पन्न हो जाते हैं। इनका रंग भोजन के रंग जैसा ही होने से कृत्रिम प्रकाश में हम इन्हें प्रायः नहीं नहीं देख पाते हैं। कृत्रिम प्रकाश में उजाला तो है, परन्तु वह सूर्य की बराबरी नहीं कर सकता। पूर्ण शाकाहारियों के लिये यह भोजन निश्चित रूप से त्याज्य होता है। रात्रि में तमस (अँधेरे) के कारण वैसे भी भोजन तामसिक बन जाता है। रात्रि भोजन करने से स्मरण शक्ति कमजोर होने लगती हैं। व्यक्ति अपनी क्षमताओं को पूर्ण रूपेण विकसित नहीं कर पाता।

बिजली की रोशनी में भोजन करने से अंधेरे के कीटाणु तो हमारे भोजन के नजदीक आते ही हैं परन्तु साथ में प्रकाश के किटाणु और नये उत्पन्न होते हैं, जो भोजन में सम्मलित हो जाते हैं, तथा जो स्वास्थ्य बिगाड़ने में सहायक होते हैं।

कहने का आशय यही है कि प्रकृति के नियम व्यक्तिगत अनुकूलताओं के आधार पर नहीं बदलते। हमारी जीवन पद्धति के अनुरूप सूर्योदय और सूर्यास्त का समय निश्चित् नहीं होता । बुद्धिमान वहीं है जो प्रकृति के अनुरूप अपने आपको ढाल लेता है। परन्तु आज हमारे दिल और दिमाग में ये बाते नहीं बैठ पा रही है। हमारे **Lunch** और **Dinner** रोगों के मंच बनते जा रहे हैं। स्वास्थ्य मंत्रालय को पूर्वाग्रह छोड़ इस सत्य को स्वीकार करना चाहिये तथा भोजन के उपयुक्त सर्वोत्तम समय की जानकारी जन साधारण तक पहुँचानी चाहिये। सारी सामाजिक एवं सरकारी व्यवस्थाओं को उसके अनुरूप बदलने की पहल करनी चाहिये। यदि उचित समय पर भोजन न किया जाए तो हमें हमारी पाचन क्रिया को अच्छा रखने के लिये बाह्य साधनों का उपयोग करना पड़ेगा।

रात्रि भोजन आरोग्य के साथ वैज्ञानिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं पारिवारिक दृष्टिकोण से अनुपयोगी है। हानिकारक है। प्रकृति के विरुद्ध है। अतः स्वास्थ्य प्रेमियों के लिये त्याज्य है तथा उन्हें यथा सम्भव दिन में सूर्यास्त से पूर्व ही भोजन करने का प्रयास करना चाहिये।

पाचन तंत्र को आराम हेतु उपवास

परिश्रम के पश्चात् शरीर को आराम की आवश्यकता होती है। व्यवसाय जगत में भी सप्ताह में कम से कम एक दिन अवकाश का कानूनी प्रावधान होता है। अवकाश के समय अपूर्ण कार्यों को

पूर्ण किया जा सकता है ताकि भविष्य में अधिक उत्साह एवं शक्ति से नियमित कार्यों को किया जा सके।

प्रायः जनसाधारण को जैसे सुपाच्य, पोष्टिक भोजन की आवश्यकता होती है, उसके स्थान पर अधिकांश व्यक्ति स्वाद और भूख वश अपाच्य, स्वास्थ्य के लिये अनुपयोगी, हानिकारक पदार्थों का सेवन करने में पूर्णतया विवेक नहीं रखते। फलतः पाचन तंत्र को उन पदार्थों को पचाने के लिये सदैव क्षमता से अधिक कार्य करना पड़ता है। उनको आराम नहीं मिलता। परिणामस्वरूप उनकी क्षमता क्षीण होने लगती है। पाचन तंत्र में विकार जमा होने लगता है, जिससे रक्त में भी विकार बढ़ जाते हैं।

उपवास में आहार का त्याग करने से आमाशय खाली हो जाता है तथा जठराग्नि के रूप में जो प्राण ऊर्जा आहार को पचाने में कार्य करती है उसका उपयोग पाचन तंत्र की सफाई में लग जाता है, जिससे रक्त भी शुद्ध होने लगता है तथा शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ने लगती है। जैसे कहावत है- ''पेट साफ तो सब रोग माफ'' अतः नियमित कम से कम सप्ताह में एक दिन उपवास करने वालों को पाचन संबंधी रोग होने की अपेक्षाकृत कम संभावनाएँ रहती है। आहार शरीर को आवश्यक ऊर्जा और गर्मी प्रदान करता है जबकि उपवास शरीर को आरोग्य और शुद्धि प्रदान करता है। अधिकांश पशु-पक्षी स्व स्फूर्णा से रोग होने पर सर्व प्रथम आहार त्याग करते हैं। रोगावस्था में आहार न करने से रोगी नहीं रोग भूखों मरता है। बीमारी में तो किया गया आहार विशेष रूप से रोगी का नहीं, अपितु रोग का पोषण करता है। अतः नियमित रूप से उपवास करने वाला स्वस्थ तथा पाचन संबंधी रोग के समय आहार का त्याग करने वाला जल्दी स्वस्थ होता है।

भोजन से शरीर के विकास तथा संचालन हेतु आवश्यक ऊर्जा मिलती है। अतः यह आवश्यक है कि भोजन करते समय इन उद्देश्यों की पूर्ति का विशेष खयाल रखा जायें। यदि इन बातों का ध्यान न रखा जायें तो जो भोजन स्वास्थ्यवर्धक होने के स्थान पर स्वास्थ्य भक्षक बन जाता है।

उपवास का शाब्दिक अर्थ होता है आत्मा के समीप रहने की साधना। यदि आत्मा के समीप रहने की बात समझ में आ जाये तो, उपवास का लाभ कई गुणा बढ़ जाता है। समीप रहने का मतलब आत्म स्वभाव में रमण करना। उससे शरीर का शोधन और रोगाणुओं के शान्त होने के साथ साथ चेतना की शुद्धि और अनुभूति होने लगती है। जिससे भाव, विचार, चिन्तन, मनन एवं भाषा का भी शोधन होता है। वास्तव में तो यही सच्चा उपवास कहलाता है। खाली भोजन न करना तो लंघन ही कहा जा सकता है, जिससे शरीर का शोधन तो हो सकता है, परन्तु आत्मा का नहीं। अतः उपवास में अधिकाधिक स्वाध्याय, ध्यान, आत्म-चिंतन, मनन, निरीक्षण एवं स्वदोषों की समीक्षा करनी चाहिए, मन और पांचों इन्द्रियों के अनावश्यक दुरुपयोग को रोक उनका सदुपयोग किया जाय तो आत्म-विकार, मानसिक विकार, वाणी के विकार भी शरीर के विकार के साथ दूर हो जाते हैं तथा व्यक्ति पूर्ण रूप से स्वस्थ होने लगता है।

मनुष्य में बोलने, अपने विचारों को व्यवस्थित रूप से अभिव्यक्त करने तथा वर्तमान, भूत एवं भविष्य के बारे में जानने, समझने, चिन्तन-मनन कर अपना भला-बुरा सोचने की क्षमता होती है। अतः मानव से ही बुद्धि एवं विवेक द्वारा सही स्वास्थ्यवर्धक विकारों से मुक्त भोजन के चयन की अपेक्षा रखी जा सकती है, अन्य प्राणियों से नहीं।

मनुष्य के पास में मन, वाणी और शरीर के रूप में तीन शक्तियाँ होती है और उसके साथ है तर्क, भावना और स्वविवेक का सम्बल।

भोजन का उद्देश्य मात्र भूख शान्त करना ही नहीं परन्तु कभी-कभी स्वाद का आनन्द लेना भी होता है। आजकल प्रायः अधिकांश व्यक्तियों का भूख शांत करने के साथ भोजन का मुख्य आधार होता है स्वाद। स्वाद के अधीन हो हम कभी-कभी अनावश्यक हानिकारक वस्तुएँ खाते हुए भी संकोच नहीं करते। भूख एवं आवश्यकता से ज्यादा भोजन कर लेते हैं।

भूख लगने पर खाना प्रकृति है। बिना भूख खाना विकृति है। भूखे को खिलाकर खाना हमारी संस्कृति है। शरीर में कान खुले हैं, आँखों पर भी साधारण पलकें है, नाक खुली है, परन्तु जीभ मुँह में बन्द है। बत्तीस पहरेदार हैं। जीभ की यह स्थिति बतलाती है कि उसके प्रयोग में विवेक की सर्वाधिक आवश्यकता है।

बार-बार खाना हानिकारक

हमारे ऋषि मुनियों ने एकासन करने की जो बात कही, उसके पीछे यही उद्देश्य था कि मुँह में जब चाहे कुछ न डाला जाये। जो कुछ खाना हो एक या दो बार ही खाया जाये ताकि हमारे आमाशय को बाकी समय पूर्ण आराम मिल जाये। जब हम कोई भी पदार्थ मुँह में डालते हैं, चाहें उसकी मात्रा बहुत कम ही क्यों न हों, इससे पूरी पाचन व्यवस्था को सजग और सक्रिय होकर अपना कार्य करना पड़ता है। जिस प्रकार किसी रेलवे फाटक पर कार्यरत चौकीदार को चाहे अकेला इंजन उधर से निकले अथवा राजधानी एक्सप्रेस, फाटक बंद करने की प्रक्रिया में उसे कोई फरक नहीं पड़ता। किसी बस में चाहे एक यात्री हो अथवा पूरी बस भरी हो, बस चालक को कोई अन्तर नहीं पड़ता। इसी प्रकार जितनी अधिक बार मुँह में कुछ भी डाला जायेगा उतना पाचन अंगों को अधिक कार्य करना पड़ेगा। परिणामस्वरूप जब हमारा मुख्य भोजन होगा तब वे अपनी पूर्ण क्षमता से कार्य नहीं कर पाते। समय पर अच्छी स्वाभाविक भूख नहीं लगती। भोजन समय की नियमितता नहीं रहती। इसी कारण आज अधिकांश व्यक्तियों का पाचन प्रायः ठीक नहीं होता। जितनी कम बार खाया जायेगा, उतनी भूख अच्छी लगेगी और पाचन अच्छा होगा।

भोजन जीवन का आधार

भोजन जीवन का आधार है। आधार हमेशा मजबूत होना चाहिए न कि मजबूरी, लापरवाही, अज्ञान अथवा अविवेकपूर्ण आचरण का। यह आवश्यक भी है और हमारे लिए चेतावनी भी है। आजकल अधिकांश व्यक्ति प्राय: भोजन शरीर की आवश्यकतानुसार नहीं करते अपितु मजबूरी और स्वाद की प्राथमिकता के अनुसार करते हैं। भोजन कितना ही संतुलित, पौष्टिक, सुपाच्य, स्वास्थ्यवर्द्धक क्यों न हो, परन्तु यदि खिलाने वाले का व्यवहार अच्छा न हो, उपेक्षापूर्ण हो, वाणी में व्यंग हो, तो ऐसा भोजन भी अपेक्षित लाभ नहीं पहुँचा सकता।

हमारी जीवन शैली और भोजन हेतु पराधीनता

अधिकांश स्वस्थ व्यक्तियों को सावधानी रखते हुए वही भोजन लेना पड़ता है जो घर अथवा भोजनालयों में बनता है। रोग की अवस्था में तो रोगी के आहार की तरफ प्राय: विशेष सावधानी रखी जाती है। घर में प्रत्येक परिजन की शारीरिक आवश्यकतानुसार प्राय: भोजन नहीं बनता। अत: भोजन करते समय भोजन के पदार्थों के बारे में व्यर्थ चिन्तन नहीं करना चाहिये। जिससे व्यर्थ तनाव और चिंता होती है। जो भोजन में उपलब्ध पौष्टिक तत्त्वों की कमी से ज्यादा हानिकारक होती है। अत: उपलब्ध भोजन को शांत भाव से, स्वविवेक एवं सजगता पूर्वक ग्रहण करना ही अधिक लाभप्रद होता है।

भोजन में स्वविवेक आवश्यक

स्वास्थ्य जो तन, मन और आत्मा के एक संतुलित, अनुशासित समन्वय का प्रतीक है कोई ऐसी वस्तु नहीं, जिसकों बाजार से खरीदा जा सकें अथवा उधार लिया जा सकें, या चुराया जा सकें। स्वस्थ रहना भी एक कला है, एक विज्ञान है, एक दृष्टि है, एक सोच और सम्यक् चिन्तन का प्रतिफल हैं। भोजन उसका महत्त्वपूर्ण पक्ष है। प्रत्येक चमकती वस्तु हीरा नहीं होती। ठीक उसी प्रकार भोजन के संबंध में भी आधुनिक वैज्ञानिकों और चिकित्सकों की सोच शत-प्रतिशत सही हो आवश्यक नहीं है, अत: उसका अन्धा:नुकरण नहीं करना चाहिए।

क्या खाद्य पदार्थों का आकार अंगों को प्रभावित करता है?

आजकल भोज्य पदार्थों के आकार के आधार पर ही शरीर के विभिन्न अंगों के आवश्यकताओं की पूर्ति में भी सहयोग लिया जा रहा है। मिलते-जुलते आकार की संरचना के पीछे भी कुछ एकरूपता संभावित लगती है। बादाम का आकार आंख जैसा, काजू का आकार गुर्दे के समान, अखरोट का आकार मस्तिष्क के समान, सेव का आकार हृदय जैसा, अंगूर का गुच्छा फेंफड़ों जैसा, पपीता पेट के जैसा दिखता है। अत: ये पदार्थ खाने से सम्बन्धित अंग विशेष रूप से प्रभावित होते हैं। इसी प्रकार शरीर के अन्य अंगों का आकार भी किसी न किसी खाद्य पदार्थ के वास्तविक स्वरूप के समान हो सकता है। जिससे पड़ने वाले प्रभावों पर वैज्ञानिक शोध की आवश्यकता है।

-: चोरडिया प्रकाशन की पुस्तकें :-

(लेखक - डॉ. चंचलमल चोरडिया)

क्र.स.	विवरण	सहयोग राशि
1.	आरोग्य आपका।	260 रु.
2.	स्वस्थ रहें या रोगी फैसला आपका ?	40 रु.
3.	शरीर स्वयं का चिकित्सक	15 रु.
4.	मौलिक चिकित्सा कौनसी	20 रु.
5.	बिना दवा मधुमेह (डायबिटीज) का प्रभावशाली उपचार	20 रु.
6.	भोजन और स्वास्थ्य	20 रु.
7.	क्या हम स्वस्थ रहना चाहते हैं ?	10 रु.
8.	जीवन है अनमोल (भजन संकलन)	20 रु.
9.	स्वास्थ्य हेतु सम्यक् चिन्तन आवश्यक।	10 रु.
10.	सजगता ही स्वास्थ्य है।	10 रु.
11.	प्रभावशाली स्वावलंबी उपचार।	10 रु.
12.	नाड़ी तंत्र एवं मांसपेशियों का उपचार।	15 रु.
13.	Resetting of Disturbed LEG, SPINE & NAVEL	21 रु.
14.	UROPATHY	15 रु.
15.	स्वास्थ्य का दर्पण आरोग्य आपका	15 रु.
16.	प्रभावशाली उपचार हेतु सही निदान आवश्यक	10 रु.
17.	सुखी जीवन का मूलाधार अहिंसक जीवन शैली	15 रु.
18.	निर्दोष, स्वास्थ्यवर्धक जीवन शैली	11 रु.
19.	प्रभावशाली अहिंसक चिकित्सा पद्धतियाँ (प्रथम संस्करण)	40 रु.
20.	हम कितने शाकाहारी ? (उपलब्ध नहीं)	6 रु.
21.	आपका आरोग्य आपके पास	25 रु.
22.	आपका उपचार आपके पास	10 रु.
23.	निर्दोष श्रमणोपचार	15 रु.
24.	स्वास्थ्य का अमूल्य खजाना : मानव मूत्र	20 रु.
25.	हम कितने अहिंसक ?	10 रु.
26.	भोजन हेतु पशु हिंसा अनुचित	10 रु.
27.	क्या बुद्धिमान व्यक्ति मांसाहारी हो सकता है ?	10 रु.
28.	प्रभावशाली स्वावलम्बी लीवर शुद्धिकरण चिकित्सा	10 रु.
29.	प्रभावशाली अहिंसक चिकित्सा पद्धतियाँ (संशोधित संस्करण)	45 रु.
30.	पीने योग्य शक्तिवर्धक पानी	10 रु.
31.	स्वास्थ्यवर्धक भोजन कैसा हो ?	20 रु.
32.	स्वास्थ्य मंत्रालय स्वावलम्बी चिकित्सा पद्धतियों के प्रति कितना सजग ?	20 रु.
33.	अहिंसक चिकित्सा पद्धतियों पर चिन्तन आवश्यक	20 रु.

(लेखिका - श्रीमती रतन चोरडिया)

1.	आत्म-वैभव	25 रु.
2.	आपका उपचार आपके घर।	25 रु.
3.	मृत्यु एक महोत्सव।	15 रु.
4.	दो कदम लक्ष्य की ओर।	11 रु.
5.	मैं कौन हूँ ?	50 रु.

(नोट : पोस्टेज एवं डिलेवरी शुल्क अतिरिक्त)